''तुलसी के काव्य द्वारा आदर्श समाज के परिप्रेक्ष्य में विचार मंथन''

रेनू चौरसिया*

मध्यकलीन भक्तकवियों में गोस्वामी तुलसीदास का स्थान अत्यन्त श्रेष्ठ है। गोस्वामी तुलसीदास भक्तिकाल की सगुण धारा के अन्तर्गत आने वाली रामभक्ति शाखा के प्रतिनिधि कवि हैं। उनके साहित्य रूपी सागर का जितना अधिक मंथन होता जाता है उतने ही अमूल्य विचार रूपी रत्नों की प्राप्ति हमें होती जाती है। गोस्वामी तुलसीदास भारतीय जनता के प्रतिनिधि कवि कहे जाते हैं, उनकी दृष्टि अत्यन्त विस्तृत एवं व्यापक है। उनके साहित्य के विषय में डॉ0 नगेन्द्र का विचार है कि, ''एक ओर तो उन्होंने नाथ पंथियों के प्रभाव से नष्ट होती हुई जनमानस की विश्वासमयी रागात्मिका वृत्तियों को रामभक्ति के माध्यम से पुनः पल्लवित किया और दूसरी ओर रामकथा के विविध प्रसंगों के माध्यम से राजनीतिक, सामाजिक एवं पारिवारिक जीवन के आदर्शों को जनता के सामने प्रस्तुत कर विश्रृंखलित हिन्दू समाज को केंद्रित किया।''[1] (पृ0–176)

गोस्वामी जी की कविता का मूल उद्देश्य लोक मंगल का विधान करना है और लोक का मंगल तभी हो सकता है जब सामाजिक एवं पारिवारिक परिवेश में मानवीय मूल्यों अथवा नैतिक मूल्यों की स्थापना हो, साथ ही उच्च जीवन–मूल्यों पर सबका ध्यान केन्द्रित हो। तुलसीदास की काव्य कषति में लोकमंगल का जो भाव विद्यमान है वह उनकी सामाजिक, सांस्कृतिक एवं राजनैतिक दृष्टि से उत्पन्न हुआ है।

आदर्श समाज से हमारा अभिप्राय मानव समूह की जीवन–शैली, चारित्रिक आदर्श, सांस्कृतिक निष्ठा, धार्मिक भावना, राजनैतिक व्यवस्था, संगठनात्मक शक्ति आदि के सम्बन्ध में निर्मित दृष्टिकोण से हैं। गोस्वामी जी ने अपनी काव्य कृतियों के माध्यम से तत्कालीन समाज में मानव के कल्याण एवं विकास हेतु आदर्श स्थापित किया क्योंकि तत्कालीन समाज में अनेक प्रकार की रूढ़ियों और अंध विश्वासों का बोलबाला था। समाज में स्त्रियों की दशा अत्यन्त दयनीय थी, समाज में नारी मात्र भोग्य वस्तु बनकर रह गयी थी, उसकी शिक्षा–दीक्षा अथवा व्यक्तित्व विकास की ओर किसी का भी ध्यान नहीं था। समाज में मानवीय मूल्यों का अत्यधिक ह्रास हो चुका था, अपने स्वार्थों की पूर्ति के लिए लोग पाखण्डों एवं छल से युक्त मार्ग का सहारा लेते थे। अतः समाज की इस दुरवस्था (दुर्दशा) को देखकर

*शोध छात्रा, आर्य महिला पी0जी0 कॉलेज, (का० हि० वि० से सम्बद्ध) चेतगंज, वाराणसी।

गोस्वामी जी व्यथित हो उठें तथा उन्होंने लोक के हित हेतु अपनी अनेक कृतियों का प्रणयन किया, जिसमें उन्होंने तत्कालीन समाज की विभिन्न विकृतियों एवं विपन्नताओं (भाग्यहीनता) के प्रति गहरी आसक्ति के साथ अपनी तीव्र प्रतिक्रिया व्यक्त की है।

गोस्वामी तुलसीदास द्वारा रचित 'रामचरितमानस' तत्कालीन समाज में आदर्श स्थापित करने हेतु सर्वश्रेष्ठ कृति है। तुलसीदास का रामचरितमानस व्यवहार का दर्पण है, जिसमें उन्होंने मर्यादा पुरूषोत्तम राम के माध्यम से सभी सामाजिक सम्बन्धों का आदर्श रूप प्रस्तुत किया है। मनुष्य को कैसा आचरण करना चाहिए इसका उपदेश रामचरितमानस के चरित्रों का अवलोकन करने से हमें प्राप्त होता है।

तुलसीदास की मान्यता थी कि समाज का कल्याण तभी सम्भव है जब समाज का प्रत्येक वर्ग अपनी भूमिका का निर्वाह करें, किन्तु जब ब्राम्हण अपने कार्य पथ से हट कर लोलुप और कामी हो जाएँ, शूद्र जप–तप करने वाले हो जाएँ, स्त्रियाँ पतिव्रत धर्म का पालन न करके अन्य पुरूषों को रिझाती फिरेंगी, विधवाएँ श्रृंगार करके समाज को भ्रष्ट करने का कार्य करेंगी तब समाज पतन की ओर बढ़ता चला जाएगा। इस प्रकार गोस्वामी तुलसीदास समाज में ऐसी व्यवस्था स्थापित करना चाहते थे, जो समाज एवं परिवार में नैतिक मूल्यों की पक्षधर हो। वह एक ऐसे सुन्दर समाज की परिकल्पना कर रहे थे, जहाँ सभी सुखी हों, सम्पन्न हों तथा सभी रोगों से मुक्त हों। तुलसीदास साहित्य के मर्मज्ञ विद्वान डॉ0 उदयभानु सिंह के अनुसार ''तुलसीदास सनातनधर्मी थे।कृकृउनकी दृष्टि में मानव–धर्म, वर्ण–धर्म, आश्रम–धर्म, राजधर्म और स्त्री–धर्म, धर्म के प्रमुख रूप हैं, इनके समुचित परिपालन पर ही समाज का कल्याण निर्भर है।''[2] (पृ0–193)

गोस्वामी तुलसीदास ने अपनी रचनाओं में अपने समय की परिस्थितियों का यथातथ्य वर्णन किया है, उन्होंने तत्कालीन समाज की स्थिति को देखते हुए उस समय की दुरवस्था (दुर्दशा) का निरूपण (उल्लेख) अपनी कृति रामचरितमानस, कवितावली, गीतावली, विनय–पत्रिका और दोहावली में भी किया है। गोस्वामी जी ने रामचरितमानस में विभिन्न पात्रों के माध्यम से पारिवारिक आदर्श प्रस्तुत किया है, साथ ही उन्होंने तत्कालीन समाज के सामाजिक एवं सांस्कृतिक परिस्थितियों का यथातथ्य चित्रण उत्तरकाण्ड में कलियुग का वर्णन करते हुए किया है। समाज की समाजिकता बनाएँ रखने हेतु पारिवारिक आदर्श अत्यन्त महत्वपूर्ण है अतः रामचरितमानस में तुलसीदास ने राम को एक आदर्श पुत्र, भाई, मित्र, स्वामी, राजा के रूप में प्रस्तुत किया है। आदर्श पुत्र के रूप में राम जो पिता की आज्ञा पर मिलने वाले राज्य को त्यागकर वन गमन हेतु तुरन्त प्रस्तुत हो जाते हैं और माता कैकेयी से कहते हैं कि–

''सुनु जननी सोइ सुतु बड़भागी। जो पितु मातु वचन अनुरागी।।
तनय मातु पितु तोष निहारा। दुर्लभ जननि सकल संसारा।।''[3]

(मानसः अयोध्याकाण्ड, 41–4) पृ0–198

आदर्श भातृ स्नेह की जीवित–जागृत प्रतिमा हेतु उन्होंने राम और भरत के स्नेह को प्रस्तुत किया है, यथा–

''जौ न होत जग जनम भरत को। सकल धरम धुर धरनि धरत को।।
कवि कुल अगम भरत गुन गाथा। को जानइ तुम्ह बिनु रघुनाथा।।[4]

(मानसः अयोध्याकाण्ड, 233–1) पृ0–277

अर्थात् यदि पृथ्वी पर भरत का जन्म न होता तो पृथ्वी पर धर्म की धुरी को कौन धारण करता? हे राम! तुम्हारे बिना भरत जी के गुणों की कथा को भला और कौन जान सकता है?

आदर्श पत्नि के चित्रण हेतु उन्होंने सीता के पतिव्रत धर्म के आदर्श रूप प्रस्तुत करते हुए अपने पति का अनुगमन करते हुए चौदह वर्ष का वनवास ग्रहण करती हैं क्योंकि राजमहल के भोग उनके लिए रोग के समान है, यथा–

''भोग रोगसम भूषन भारू। जम जातना सरिस संसारू।।
प्राननाथ तुम्ह बिनु जग माहीं। मो कहुँ सुखद कतहुँ कछु नाहीं।।
जिय बिनु देह नदी बिनु बारी। तैसिअ नाथ पुरूष बिनु नारी।।'' [5]

(मानसः अयोध्याकाण्ड, 65–3,4) पृ0–208

अर्थात् प्राण के बिना शरीर और जल के बिना जैसे नदी होती है, वैसे ही पुरूष के बिना नारी है।

गोस्वामी तुलसीदास ने अपने सामाजिक आदर्श भारतीय संस्कृति की नींव पर खड़े किए है। गोस्वामी जी ने रामचरितमानस के उत्तरकाण्ड में तत्कालीन सामाजिक स्थिति का अत्यन्त मार्मिक चित्रण किया तथा रामराज्य की परिकल्पना करते हुए आदर्श शासन–व्यवस्था का प्रारूप भी प्रस्तुत किया है। यथा–

''दैहिक दैविक भौतिक तापा। राम राज नहिं काहुहि व्यापा।।
सब नर करहिं परस्पर प्रीती। चलहिं स्वधर्म निरत श्रुति नीती।।'' [6]

(मानसः अयोध्याकाण्ड, 21–1) पृ0–485

इसका अभिप्राय यह है कि उन्होंने समाज में व्याप्त कुरीतियों, बुराईयों, दण्ड और दमन पर आधारित शासन–व्यवस्था, विवेकहीनता तथा प्रजा द्रोह के विपरीत सुन्दर राम राज्य की परिकल्पना प्रस्तुत की। अर्थात् राम के राज्य में कोई भी त्रिपात से पीड़ित नहीं था अर्थात् व्यक्ति समाज और प्रकृति में अपेक्षित सामंजस्य था। सभी अपने आदर्शों और नियमों के अनुसार आचरण करते थे।

साथ ही उन्होंने उत्तरकाण्ड में सन्त और असन्त के लक्षण को भी प्रस्तुत करते हुए कहते हैं कि सन्त वे होते हैं जिनका चित्त कोमल होता, जो दीनों पर दया करते हैं तथा मन, वचन और कर्म से विशुद्ध भक्त होते हैं–

''कोमलचित दीनन्ह पर दाया। मन बच क्रम मम भगति अमाया।।'' [7]

(मानसः उत्तरकाण्ड, 38–2) पृ0–492

जबकि असन्त अर्थात् दुष्ट वह होता है जो काम, क्रोध, लोभ से युक्त होता है तथा निर्दय, कपटी एवं कुटिल स्वभाव का होता है, यथा–

''काम क्रोध मद लोभ परायन। निर्दय कपटी कुटिल मलायन।।'' [8]

(मानसः उत्तरकाण्ड, 39–3) प0–493

गोस्वामी जी ने आदर्श समाज हेतु एवं असन्त के कर्म को चन्दन एवं कुल्हाड़ी उदा0 के द्वारा भी प्रस्तुत किया, यथा–

''संत असंतन्हि कै असि करनी। जिमि कुठार चंदन आचरनी।।
काटइ परसु मलय सुनु भाई। निज गुन देइ सुगंध बसाई।।''
ताते सुर सीसन्ह चढ़त, जग बल्लभ श्रीखंड।
अनल दाहि पीटत धनहिं, परसु बदन यह दंड।।'' [9]

(मानसः उत्तरकाण्ड, 37–4) पृ0–492

अर्थात् कुल्हाड़ी चन्दन को काटती है, परन्तु चन्दन फिर भी अपनी सुगन्ध कुल्हाड़ी को देकर उसे सुवासित कर देता है। इसी गुण के कारण चन्दन देवताओं के सिर पर चढ़ता है और जगत में सबको प्रिय है जबकि कुल्हाड़ी को आग में तपाया जाता है और उसके मुख को कठोर होने के कारण घन से पीटा जाता है। इस प्रकार सन्त और असन्त के लक्षण के माध्यम से भी गोस्वामी जी सामाजिक आदर्श एवं सामाजिक जीवन मूल्यों को व्यक्त करते हैं।

इसी प्रकार कवितावली के उत्तरकाण्ड के अन्तर्गत गोस्वामी जी ने तत्कालीन आर्थिक अभाव और उससे उपजी दारूण पीड़ा को भी बड़े मार्मिक ढ़ंग से चित्रित किया है। उन्होंने यात्रियों को ठगने वाले असामाजिक तत्वों को कठोर शब्दों में चेतावनी भी दी है। गोस्वामी जी ने समाज की इस पतनोन्मुख दशा का चित्रण करते हुए लिखा है कि न तो किसान को खेती में कुछ मिलता है, न भिखारी को भीख मिलती है, व्यापारी के लिए व्यापार नहीं है तथा आजीविका खोजे से भी नहीं मिलती। यथा–

''खेती न किसान को, भिखारी को न भीख, बलि,
बनिक को बनिज, न चाकर को चाकरी।

जीविका विहीन लोग सीद्यमान सोच बस,
कहैं एक एकन सों 'कहाँ जाई, का करी?'' [10]

(कवितावली – उत्तरकाण्ड, पृ0–112)

तत्कालीन समय में राज व्यवस्था भ्रष्ट थी, राजा धर्मपरायण नहीं थे और वे अकारण ही प्रजा को दण्डित करते रहते थे। समाज में ऊँच–नीच का भेद व्याप्त था तथा कोई भी अपने धर्म का पालन नहीं कर रहा था, लोग ज्ञानियों को नहीं बल्कि आडम्बरयुक्त फिजूल बातें करने वालों को पण्डित मानते थे। पुरूषों में वासनावृत्ति बढ़ती जा रही थी, वह कुलवन्ती नारियों को घर से निकाल देते तथा दासियों को घर ले आते थे। कोई भी व्यक्ति बहिन बेटी का विचार नहीं कर रहा था, यथा–

''कुलवंति निकारहिं नारि सती। गृह आनहिं चेरि निबेरि गती।।
सुत मानहिं मातु पिता तब लौं। अबलानन दीख नहीं जब लौं।।'' [11]

(मानस : 7/101–2) पृ0–522

''कलिकाल विहाल किए मनुजा। नहिं मानत क्वौ अनुजा तनुजा।।'' [12]

(मानस : 7/102–3) पृ0–523

गोस्वामी जी ने 'विनयपत्रिका' के माध्यम से भी तत्कालीन युग को दर्शाया है, जहाँ लोगों में असन्तोष, अविश्वास, भ्रष्टाचार, ईश्वर के प्रति अनास्था व्याप्त थी। इस स्थिति को देखते हुए तुलसीदास ने विनय के पद गाते हुए श्रीराम की भक्ति व प्रेम को दर्शाया है तथा आदर्श समाज के लिए सार्थक जीवन शैली के समाधान हेतु सफल प्रयास भी प्रस्तुत किया है, यथा–

दीनदयालु, दुरित–दारिद–दुख दुनी दुसह तिहुँ ताप तई है।
देव दुवार पुकारत आरत, सबकी सब सुख हानि भाई है।।1।।
परमारथ स्वारथ, साधव भये अकल, सफल नहिं सिद्धि सई है।
कलि–करनी बरनिये कहाँ लौ, करत फिरत बिनु टहल टई है।
तापर दाँत पीसि कर मींजत, को जानै चित कहा ठई है।।2।। [13]

(विनयपत्रिका, पद–139, पृ0–225, 226)

इस प्रकार तुलसीदास ने यहाँ पर तत्कालीन समाज में व्याप्त पाप, दरिद्रता, दुःख और तीनों प्रकार के दुःसह दैविक, दैहिक और भौतिक तापो से समाज को त्रस्त एवं जलते हुए दर्शाया है, जिसके लिए गोस्वामी जी ने भगवान श्रीराम से आर्त स्वर में पुकार की है कि हे प्रभु! आप हम मनुष्यों का उद्धार करें।

गोस्वामी जी सामाजिक अथवा राष्ट्रीय जीवन में संगठन अर्थात् एकता के महत्व को भली प्रकार पहचानते थे। संगठन करने की शक्ति ही लोगों में प्रेम, सहयोग, सहानुभूति और सद्भावना का विकास करती है, यह शक्ति सामाजिक

जीवन में व्यक्ति, परिवार, समाज और शासन के परस्पर सम्बन्धों में मूल्यधर्मी सामंजस्य भी करती हैं।

इसी प्रकार डॉ0 जितेन्द्र कुमार सिंह का मानना है कि ''तुलसीदास के सभी ग्रंथ भक्ति, प्रेम और समन्वय की दृष्टि से उच्चकोटि के हैं। उन्होंने अनेक प्रकार के समन्वय पर बल देकर समाज को विश्रृंखलित होने से बचाया।'' [14]

इस प्रकार गोस्वामी तुलसीदास अपने युग के युग प्रवर्तक एवं भविष्यद्रष्टा कवि थे। इनकी प्रासंगिकता भारतीय इतिहास के मध्यकाल तक ही सीमित नहीं है बल्कि आज के भ्रष्ट जटिल तनाव में जकड़े उत्तर आधुनिक काल में भी विद्यमान है। हम देख सकते हैं कि तुलसीदास ने अनेक काव्य ग्रन्थों का प्रणयन किया है जिसमें 'श्रीरामचरितमानस' तुलसी के चिन्तन का सार है। यह लोक मर्यादा एवं आदर्श चरित्रों का विश्वकोश है। इसका अनुशीलन करने से समाज, धर्म तथा संस्कृति के समक्ष आई विपदा को भी हम सरलतापूर्वक पर कर सकते हैं क्योंकि आज हमारे समाज में सत्ता की अंधी दौड़ मची है, शिक्षालय अपराध के और शिक्षक अव्यवस्था के प्रशिक्षण केन्द्र बन चुके हैं। इसके साथ ही आज समाज में घूसखोरी, भ्रष्टाचार, जातिवाद का कराल विष फैल गया है। ऐसी परिस्थिति में पुनः आदर्श समाज को स्थापित करने हेतु गोस्वामी तुलसीदास की काव्य कृति ही एकमात्र समाधान है, कि लोक मंगल का विधान करती है।

संदर्भ–ग्रन्थः

1. हिन्दी साहित्य का इतिहास, संपादक, डॉ0 नगेन्द्र, प्रथम संस्करणः 1973, छियालिसवां संस्करण 2014, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, 2/35, अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली–110002। पृष्ठ 176
2. तुलसी–काव्य मीमांसा, उदयभानु सिंह, राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा0लि0, दरियागंज, नई दिल्ली, दूसरा संस्करण : 2002। पृष्ठ 193
3. श्रीरामचरितमानस, तुलसीदासविचरित, गीताप्रेस, गोरखपुर–273005, सं0 2065 एक सौ नवाँ पुनर्मुद्रण, पृ0–198।
4. श्रीरामचरितमानस, तुलसीदासविचरित, गीताप्रेस, गोरखपुर–273005, सं0 2065 एक सौ नवाँ पुनर्मुद्रण, पृ0–277।
5. वही, पृ0–208। 6. वहीं–पृ0–485। 7. वहीं–पृ0–492।
8. वहीं–पृ0–493। 9. वहीं–पृ0–492।
10. कवितावली, तुलसीदास, गीताप्रेस, गोरखपुर, संवत् 2066, पचासवाँ पुर्नमुद्रण, पृ0–112।
11. श्रीरामचरितमानस, तुलसीदासविचरित, गीताप्रेस, गोरखपुर–273005, सं0 2065 एक सौ नवाँ पुनर्मुद्रण, पृ0–522।
12. वही, पृ0–523।
13. विनय पत्रिका, तुलसीदास, गीताप्रेस, गोरखपुर, संवत् 2039, उन्तीसवाँ संस्करण, पृ0–225, 226।
14. नागरी पत्रिका, संस्थापक व सम्पादक–स्व0 पं0 सुधाकर पाण्डेय, नागरीप्रचारिणी सभा, वाराणसी, पृ0–31।